डाक पंजीयन संख्या - श्रीगंगानगर/105/2006-2008
आर. एन. आई - राजहिन /2003/9899
प्रकाशन दिनांक : 6 मई - 2007 . मूल्य : पाँच रुपये

अजायब बानी

(गुरु महिमा)

वर्ष - पाँच | अंक - पहला | मई - 2007 | मासिक पत्रिका

नाम 3

गुरु रामदास जी की बानी
सतसंग–परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज
16 पी.एस.राजस्थान   6 अप्रैल 1991

सेवा का महत्त्व 21

परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज द्वारा प्रेमियों के सवालों के जवाब
मुम्बई 15 जनवरी 1980

मन की एकाग्रता 29

परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज द्वारा गुफा दर्शनों के समय महत्त्वपूर्ण सन्देश
16 पी.एस. राजस्थान 31 अक्टूबर 1987

धन्य अजायब 32

सतसंग के कार्यक्रमों की जानकारी

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक, मुद्रक व सम्पादक : प्रेम प्रकाश छाबड़ा ने प्रिन्ट टुडे श्री गंगानगर से छपवाकर, 1027 अग्रसेन नगर श्री गंगानगर–335 001 (राजस्थान) से प्रकाशित किया।

उप सम्पादक : नंदिनी
विशेष सलाहकार : गुरमेल सिंह नौरिया
सहयोग : शैलेष शाह, जयप्रकाश तपाड़िया व परमजीत सिंह
पृष्ठ डिजाइनिंग : राजेश कुक्कड़

सन्त बानी आश्रम
16 पी.एस. रायसिंहनगर–335 039 जिला–श्री गंगानगर (राजस्थान)

Phone : 0154-246 4601 **Mobile :** 94144 - 80303
e-mail : dhanajaibs@yahoo.co.in **Website :** www.ajaibbani.org

62

सतसंग–परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज

नाम

16 पी.एस.राजस्थान 6 अप्रैल 1991 | गुरु रामदास जी की बानी

सब समाज यह तो मानते हैं कि मुक्ति, शान्ति, तृप्ति '**नाम**' में है लेकिन वे यह नहीं जानते कि '**नाम**' ताकत है या लफ्ज़ है। जो अल्लाह! अल्लाह! करता है वह कहता है कि मैं 'सच्चा नाम' जप रहा हूँ। जो राम! राम! करता है वह समझता है कि मैं 'सच्चा नाम' जप रहा हूँ। जो वाहे गुरु! वाहे गुरु! करता है वह भी समझता है कि मैं 'सच्चा नाम' जप रहा हूँ। अपनी-अपनी जगह सभी ठीक हैं।

सन्त किसी की निन्दा नहीं करते। जिस तरह मिश्री-मिश्री कहने से मुँह मीठा नहीं होता, रोटी-रोटी कहने से पेट नहीं भरता और डॉलर-नोट कहने से अमीर नहीं हो सकते। कबीर साहब कहते हैं:

बिन देखे बिन अरस परस के, नाम लिए क्या होय।
धन के कहे धनी जे होय, निर्धन रहे न कोय॥

जो गिरे हुए को उठाए उसे गिरधारी कहते हैं। जो मरे हुए को जीवन बख्शे उसे मुरारी कहते हैं। कृपा करने वाले को कृपालु कहते हैं लेकिन हमने ये सब नाम प्यार से रखे हुए हैं। सन्त कहते हैं, ''जब हम अंदर जाकर गिरधारी, मुरारी, कृपालु से मिलेंगे! तभी उनसे कह सकेंगे कि हमने आपसे यह काम करवाना है।''

अगर हम पर कोई मुकदमा बन जाए! हम किसी जज के पास जाकर प्रार्थना करेंगे कि आप न्याय करें। जज हमें हाँ या न में जवाब देगा अगर वहाँ जज है ही नहीं चाहे हम उसकी पिक्चर के आगे धूप जलाएं, प्रार्थनाँए करें तो क्या हम न्याय की आशा रख सकते हैं?

सन्त हमें समझाते हैं अगर लफ्ज़ ही '**नाम**' होता तो हम उस लफ्ज़ को जपकर मुक्ति प्राप्त कर सकते थे।

महाराज सावन सिंह कहा करते थे, ''अगर '**नाम**' लफ़्ज़ होता तो पाँच साल की लड़की भी 'नाम' दे सकती थी। 'नाम' एक ताकत है। यह 'नाम' जर्रे-जर्रे में व्यापक है।'' अगर '**नाम**' लफ़्ज़ होता तो गुरु अमरदेव जी को 72 वर्ष की आयु में 12 साल तक गुरु अंगददेव जी की सेवा करने की क्या जरूरत थी? गुरु नानकदेव जी कहते हैं:

राम राम सबको कहे, कहयां राम न होय।
गुरु प्रसादी राम मन बसे, तां फल पावे कोय॥

आप कहते हैं, ''राम! राम! कहने से राम नहीं मिलता। तोता भी सारा दिन राम! राम! करता है अगर कहने से राम मिलता होता तो वह भी तृप्त हो जाता। '**नाम**' की दौलत हमें सन्त-महात्माओं से मिलती है। परमात्मा सन्तों को '**नाम**' का भंडारी बनाकर इस संसार में भेजता है। हमारा दुश्मन मन हमें अंदर जाने की बजाय बाहर कभी जप-तप, पूजा-पाठ, जलधारे करने में लगा देता है, कभी तीर्थ स्थानों में ले जाता है और कभी घर-बार छोड़कर जंगल-पहाड़ों में छिप जाने की सलाह देता है कि गृहस्थ जीवन ठीक नहीं।'' पल्टू साहब कहते हैं:

नाम नाम सब कहत है, नाम न पाया कोय।
नाम न पाया कोय, नाम की गति है न्यारी॥
सन्त स्नेही नाम है, नाम स्नेही सन्त।
नाम स्नेही सन्त, नाम को वही मिलावे॥
वे हैं वाकिफकार, मिलन की राह बतावे।
पल्टू ये है प्राण पथ, आदि से अन्त॥
सन्त स्नेही नाम है, नाम स्नेही सन्त।

सन्त नामरूप होते हैं। सन्त हमें '**नाम**' का संदेश देने के लिए ही संसार में आते हैं। यह 'नाम' लिखने, पढ़ने और बोलने में नहीं आता। यह '**नाम**' सब जगह मौजूद है। गुरु अर्जुनदेव जी कहते हैं:

जिस वख्खर को लैंण तू आया, राम नाम सन्तन घर पाया।
तज अभिमान लेहो मन मोर, राम नाम हृदय में तोल॥

आप कहते है, ''प्यारेया! तू इस संसार में जिस '**नाम**' को लेने के लिए आया है वह नाम तुझे सन्तों से मिलेगा। तू अभिमान छोड़कर सन्तों के पास जाकर '**नाम**' ताकत को प्राप्त कर।'' सभी सन्त परमात्मा के घर से आते हैं; वे एक-दूसरे से प्यार करते हैं। वे प्यार का संदेश देने के लिए ही आते हैं। गुरु अर्जुनदेव जी कहते हैं:

होय एकत्र मिलो मेरे भाई, दुविधा दूर करो लिव लाए।
हरि नामें के होवे जोड़ी, गुरुमुख बैठो सफा बछाए॥

प्यारेयो! हम सबका एक ही परमात्मा है, हम सब उस परमात्मा के बच्चे हैं। हम ऐसे ही एक-दूसरे के खून के प्यासे हुए बैठे हैं। किसी के लिए ईर्ष्या रखने से यह सिद्ध होता है कि हम अंदर नहीं जाते। शान्ति का मालिक '**नाम**' हमारे अंदर है लेकिन यह जीव बाहरमुखी होकर उस '**नाम**' को कभी पहाड़, कभी पानी तो कभी ग्रन्थ-पोथियों में ढूँढता है। कबीर साहब कहते हैं:

वस्तु कहीं ढूंढे कहीं, कह विधि आवे हाथ।
कहे कबीर तब पाइए, भेदी लीजिए साथ॥
भेदी लीजिए साथ, त दित्ती वस्तु लिखाए।
कोट जन्म का पंध सी, पल विच पहुँचा आए॥

हमारी वस्तु इस घर में गुम है और हम उसकी तलाश बाहर सड़कों पर कर रहे हैं अगर आपको '**नाम**' की दौलत लेनी है तो आप उस भेदी के पास जाएं जो उस वस्तु को प्राप्त कर चुका है। हम भेदी के पास गए तो भेदी ने कहा, ''यह दौलत तेरे अंदर है तू इसका मालिक है।'' फिर हम महसूस करते हैं कि अब तक हमने बाहर ही अपना समय बेकार किया। शान्ति, तृप्ति '**नाम**' में है।

नाम मिलै मन त्रिपतीऐ बिन नामैं धृग जीवास॥
कोई गुरमुख सज्जण जे मिलै मैं दस्से प्रभ गुणतास॥

यहाँ न राजा सुखी है, न प्रजा सुखी है। जीभ के चसके लेने वाले और भोग भोगने वाले भी सुखी नहीं, उनमें और तड़प बढ़ जाती है।

हम जानते हैं कि दुनिया में बड़े-बड़े राजा महाराजा आए वे जब छोटे राज्य के मालिक बनते हैं तो उनके अंदर इच्छा पैदा होती है कि वे बड़े राज्यों के मालिक बनें! खाड़ी की जंग में क्या हुआ? यह अहंकार और तृष्णा ही थी। जंग का नतीजा मौतें और बरबादी ही है अगर तृप्ति होती तो ईराक कुवैत पर हमला क्यों करता? बहुत कुछ होते हुए भी वह तृप्त नहीं था।

सन्त कहते हैं कि शान्ति और तृप्ति '**नाम**' में है। हमें कोई ऐसा गुरमुख मिले जो परमात्मा से मिलने का फायदा बताए। 'नाम' का फायदा बताए ताकि हमारा भूला हुआ मन '**नाम**' की तरफ आ सके।

हौं तिस विट्टों चौखंनीऐं मैं नाम करे परगास॥

आप कहते हैं, ''जो मेरे अंदर '**नाम**' का दीपक जला दे! मैं उस पर बलिहार जाता हूँ और अपने चार टुकड़े करके उसके ऊपर से वारने के लिए तैयार हूँ कि उसने मुझे परमात्मा की आवाज के साथ जोड़ दिया।'' जिनकी आँखें खुल जाती हैं वे जानते हैं कि '**नाम**' की दौलत सन्तों से मिलती है। सहजो बाई कहती हैं:

गुरु का बदला दिया न जाए, सर्वस वारे सहजो बाई।

आप कहती हैं, ''अगर मैं सारी दुनिया भी वार दूँ तो भी गुरु का बदला नहीं दे सकती। गुरु ने '**नाम**' का वह धन दिया है जो मूल्य देने से भी नहीं मिलता, इसे चोर चुरा नहीं सकता।'' गुरु साहब कहते हैं:

बिन नामैं को संग न साथी, मुक्ते नाम ध्यावणया।

हमारे साथ जाने वाली वस्तु '**नाम**' है। मुक्ति 'नाम' में है। सिक्खों के इतिहास में आता है कि जब फरुखसियर बादशाह ने सिक्खों के सिरों का मूल्य लगा दिया कि जो सिक्खों के सिर लाकर देगा उसे पैसा दिया जाएगा। लालची लोग पैसों के लिए क्या नहीं करते। बहुत से लोगों ने लड़कियों को कत्ल करके उनके सिर पेश कर दिए कि ये सिक्खों के बच्चों के सिर हैं।

जंगलों में घूमता हुआ सिक्खों का एक काफिला पकड़ा गया, जिसमें एक छोटा सा बच्चा भी था। वह बच्चा अपनी माता का इकलौता बेटा था। उस बच्चे की माता का वजीर की पत्नी के साथ अच्छा सम्बन्ध था। उसने विनती की कि मेरा एक ही बेटा है उसकी जान बख्श दी जाए। जब बादशाह को बताया गया तो उसने शर्त रखी कि अगर वह बच्चा यह कह दे कि मैं गुरु का सिक्ख नहीं हूँ तो उसे छोड़ देंगे।

माता ने अपने बेटे को बताया कि मैं वजीर से मिल चुकी हूँ। वे जब तुझसे पूछें तो तू कह देना कि मैं गुरु का सिक्ख नहीं हूँ; वे तुझे छोड़ देंगे। माता नहीं जानती थी कि उसका बेटा अंदर से कितना मजबूत है? लड़के ने माता की बात सुन ली, वह चुप रहा कि मेरी माता तो सतसंग में कपड़े झाड़कर ही आ जाती है अगर यह जानती कि गुरु क्या ताकत है तो मुझे गुरु के रास्ते से गुमराह न करती।

अगले दिन सारे सिक्खों को कचहरी में पेश किया गया तब वह लड़का बोला कि सबसे पहले मुझसे पूछा जाए। उस लड़के से पूछा गया, ''क्या तू गुरु का सिक्ख है?'' लड़के ने कहा, ''हाँ! मैं गुरु का सिक्ख हूँ; मेरा पिता भी गुरु गोविंद सिंह जी का सिक्ख था। आप सबसे पहले मेरा कत्ल करें ताकि मेरी माता शान्त हो जाए और यह भी जान जाए कि गुरु क्या है?''

प्यारेयो! जिनके अंदर '**नाम**' का रस आ जाता है वे गुरु पर कुर्बान हो जाते हैं अगर उन्हें यह कहें कि दुनिया की सारी धन-दौलत ले लो! गुरु का रास्ता छोड़ दो। वे कभी भी गुरु का रास्ता नहीं छोड़ेंगे क्योंकि उन्होंने अंदर जाकर देख लिया होता है कि गुरु जैसा कौन है? सहजो बाई कहती हैं:

राम तजूँ पर गुरु न विसारूँ।

मैं राम को छोड़ सकती हूँ, गुरु को नहीं भूल सकती क्योंकि:

हरि ने जन्म दिया जग माहीं, गुरु ने आवागमन छुड़ाही।

मैं हरि की निन्दा नहीं करती। हरि ने मुझे इस संसार में जन्म देकर दुःखों की नगरी में भेजा है। गुरु ने '**नाम**' देकर आवागमन का चक्कर ही खत्म कर दिया है।

हरि ने मुझसे आप छुपायो, गुरु दीपक दे ताँहें दिखायो॥

हरि अपना आप छुपाकर मेरे अंदर बैठ गया है। मैंने अनेकों जन्म लिए और सुखों-दुःखों के शरीर धारण किए लेकिन गुरु ने '**नाम**' का दीपक दिखाकर सीधा रास्ता बता दिया कि यह रास्ता तेरे घर को जाता है। हरि ने कई बंधन लगाए हुए हैं कि इस तरह से जप-तप करोगे तभी मुझे पा सकते हो लेकिन गुरु ने मेरे सब भ्रम छुड़वा दिए। इसलिए मैं हरि को भूल सकती हूँ लेकिन गुरु को नहीं भुला सकती।

मेरे प्रीतमां हौं जीवां नाम ध्याय॥
बिन नावैं जीवण ना थीऐ मेरे सतगुर नाम दृढ़ाए॥

आप कहते हैं, ''अगर मैं 'शब्द-नाम' की कमाई करता हूँ तो ही मेरा जीवन है। '**नाम**' ही मेरी जिंदगी है। 'नाम' के बिना मैं अपने आपको मुर्दा समझता हूँ।'' सूफी सन्त फरीद साहब कहते हैंः

अज न सुत्ती कन्त स्यों, अंग मुड़े मुड़ जाए।
जाए पुछां दोहागणी, तुम को रैण बिहाए॥

एक आत्मा अभ्यास करके अंदर जाती थी वह अभ्यास न करने वाली आत्मा से बात करती है कि बहन! आज मैंने सुबह उठकर अभ्यास में गुरु के साथ मिलाप नहीं किया, मेरे अंग टूट रहे हैं। अभ्यासी जब अंदर जाकर शब्द-रूप परमात्मा के साथ मिलते हैं तो उन्हें अंदर से ताकत मिलती है, उनमें ताजगी आती है। जिन्होंने '**नाम**' न लिया हो, कभी अभ्यास न किया हो उनकी जिंदगी की रात कैसे बीतती है? गुरु नानकदेव जी महाराज कहते हैंः

अमली जिए अमल खाए, त्यों हरि जन जीए हर नाम ध्याए।

नशा करने वाला नशा करके ही जीता है। नशा खत्म हो जाए तो उसकी जान पर बन आती है। कहावत है कि अमली दिन में कई बार मरता है। इसी तरह '**नाम**' के रसियों को 'नाम' का नशा चढ़ जाता है अगर वे 'नाम' न जपें तो उनकी बुरी हालत हो जाती है।

नाम अमोलक रतन है पूरे सतगुर पास॥
सतगुर सेवै लग्गयां कढ रतन देवै परगास॥

अब गुरु रामदास जी कहते हैं, ''**नाम** अमोलक रतन है। जो वस्तु मूल्य से न मिले, जोर से हासिल न की जा सके उसे अमोलक से भी अमोलक कहते हैं। वह 'अमोलक नाम' न किताबों में है न मन्दिरों में है न मस्जिदों में है। वह अमोलक रतन '**नाम**' मालिक के प्यारे सन्तों के पास है।'' जो सन्तों की सेवा में लग जाते हैं सन्त उनके आगे यह रतन रख देते हैं, उनके अंदर 'नाम' का चिराग जला देते हैं।

सन्त-सतगुरु कहते हैं, ''प्यारेयो! इंसानी देह अमोलक है। किसी के साथ झगड़ा न करें। किसी की निन्दा न करें। 'शब्द-नाम' की कमाई करें, यही सबसे ऊँची सेवा है। आज तक जिसने भी इस रतन को पाया है गुरु की सेवा से ही पाया है।'' गुरु साहब कहते हैं:

गुरु दा सेवक ज्योंदा मरया।

जब हम अपने फैले ख्यालों को सिमरन के द्वारा नौं द्वारों में से निकालकर आँखों के पीछे आ जाते हैं; सूरज, चन्द्रमा और आकाश को पार करके अपने अंदर गुरु स्वरूप प्रकट कर लेते हैं तो गुरु के सच्चे शिष्य बन जाते हैं; इसी को जीते जी मरना कहते हैं जो यहाँ पहुँच जाता है वह कह सकता है कि मैं नरक में नहीं जाऊँगा।

बुरा भला गुरु भक्त, कदे नरक न जाए।

मैं आपको कई बार सुंदरदास की कहानी बताया करता हूँ: वह महाराज सावन सिंह का नामलेवा था। वह मेरे साथ बीस साल रहा। किसी ने उससे पूछा, ''धर्मराज को क्या बताएगा?'' उसने जवाब दिया,

''मेरा धर्मराज के पास क्या काम? मैंने तो अपने गुरु महाराज सावन सिंह जी के पास जाना है।'' उसकी मौत का नजारा हमने अपनी आँखों से देखा है, उसने अमृत वेले में अपना शरीर छोड़ा।

सुंदरदास का स्वभाव मजाक करने का था। सुंदरदास ने कई महीने पहले ही कह दिया कि मेरे शरीर छोड़ने पर भी तो आप लोकलाज पूरी करेंगे लोगों को अन्न-पानी खिलाएंगे। आप मेरे शरीर में रहते हुए ही यह सब क्यों नहीं कर देते ताकि मैं भी देख लूं! आप लोगों को कुछ खिलाते भी हैं या नहीं? हमने उसके शरीर में रहते हुए ही प्रशाद तैयार करना शुरू किया। नए कपड़े भी उसके तकिए के नीचे रख दिए। थोड़ी ही देर में उसने शरीर छोड़ दिया। मालिक के प्यारों की यह हालत होती है कि वह जीते जी ही ऐसा कह सकते हैं।

लुधियाना में हमारी एक नामलेवा लक्ष्मीदेवी का किस्सा है। पिछले साल जनवरी के महीने में ही उसने चोला छोड़ा है। उसकी बेटी ने मुझे सारा हाल बताया कि अंत समय में लक्ष्मीदेवी ने कहा, ''बाबा जी! आ गए हैं। जो लोग मेरे पास बैठे हैं वे बाहर चले जाएं।'' सतसंगी तो जानते हैं और वे सुरत को '**नाम**' की तरफ ले जाते हैं लेकिन गैरसतसंगी रिश्तेदार कहने लगे कि हम देखना चाहते हैं। वह चुप हो गई उसने आगे कुछ नहीं बताया।

महाराज सावन सिंह जी कहा करते थे, ''सतसंगी की मौत के समय अगर वहाँ कोई गैरसतसंगी है तो उसे प्यार से बाहर जाने के लिए कह दें। फिर सतसंगी से पूछें क्या सिमरन याद है? क्या स्वरूप आ रहा है? वह अवश्य बताकर जाएगा।''

महाराज सावन सिंह जी अपने जीवनकाल का वाक्या बताया करते थे कि उनकी एक नामलेवा अमृतसर में थी। उस लड़की ने आठ दिन पहले ही बता दिया कि मैं अमुक दिन चली जाऊँगी। उस मौहल्ले के लोग कहने लगे, ''क्या यह जोगन है?'' मौहल्ले के लोग दिन गिनने लगे और ठीक आठवें दिन उस लड़की ने शरीर छोड़ दिया।

महाराज सावन सिंह जी ने बताया कि जब मैं अमृतसर गया तो सारा मौहल्ला ही '**नाम**' लेने के लिए तैयार हो गया। मैंने उन लोगों से कहा कि आप पहले पक्के हो जाओ बाद में 'नाम' दूँगा।

जो सेवक इस तरह का अभ्यास करते हैं वे जीते जी मरना सीख लेते हैं। वे आँखों के पीछे आ जाते हैं '**नाम**' का मोती प्राप्त कर लेते हैं। गुरु उनकी जायदाद उनके हवाले कर देता है बल्कि अपनी कमाई में से भी कुछ दे देता है।

हम जानते हैं अगर बच्चा शराबी, कबाबी या जुएबाज हो तो दुनियावी पिता उसका हक देने के लिए भी तैयार नहीं होता कि यह इसे बेकार कर देगा अगर बच्चा कहेकार है, अच्छा है तो पिता उसे अपनी कमाई भी दे देता है। इसी तरह अगर शिष्य काबिल है विषय-विकारों से ऊपर है और अंदर जाता है तो गुरु अपनी सारी बरकतें लेकर उसके अंदर बैठ जाता है।

धन वडभागी वडभागीआं जो आय मिले गुर पास॥

आमतौर पर अगर हमारी दुनियावी तरक्की हो जाए! घर में कोई लड़का बाला पैदा हो जाए! फसल अच्छी हो जाए या किसी एक्सीडेंट से बच जाएं तो हम कहते हैं यह सब अच्छे भाग्य की वजह से हुआ है। सन्त कहते हैं, ''प्यारेयो ! ये सब आरजी सुख हैं। सबसे ऊँचे भाग्य उनके हैं जो मनुष्य जन्म में गुरु से मिलकर '**नाम**' प्राप्त कर लेते हैं।'' गुरु नानकदेव जी कहते हैं:

वडभागी गुरु दर्शन पावे, भागहीन भ्रम चोटां खावे।
बिन भागां सतसंग न लभ्भे, बिन संगत मैल भरीजे जीओ॥

परमात्मा जिन पर दया करता है वे ही महात्मा के सतसंग में जाते हैं। बाकी हम लोग भ्रम में ही रह जाते हैं कि वही सतसंग है वही बानी है जो हम रोज-रोज सुनते हैं; घर में बैठकर ही पढ़ लेंगे! ये सब मन के बहाने हैं। कबीर साहब कहते हैं:

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी हूं ते आध।
कबीरा संगत साध की, काटे कोट अपराध॥
साधु की संगत रहें, जौं की भूसी खाए।
होनहार सो होत है, साकत संग न जाए॥
सन्त की गैल न छोड़िए, मार्ग लागा जाए।

चाहे कितना भी जरूरी कारोबार हो। कितनी भी तकलीफ हो आप साधु की संगत न छोड़ें। साधु की प्यार भरी दृष्टि करोड़ों अपराध काट देती है। सन्त कहते हैं कि यहाँ आकर '**नाम**' की कमाई करें। यहाँ जितना समय बिताते हैं उसका पूरा-पूरा फायदा उठाएं। आँख आँख को देती है। भाई नन्दलाल ने गुरु गोविंद सिंह से कहा थाः

तेरी इक नज़र है, मेरी जिंदगी का सवाल है।

जिनां सतगुर पुरख न भेटयो से भागहीण वस काल॥
ओय फिर फिर जोन भवाईऐं विच विसटा कर विकराल॥

आप कहते हैं, ''जिन लोगों को इंसानी देह प्राप्त करके भी पूरा गुरु नहीं मिला वे बार-बार योनियों में जन्म लेते और मरते हैं यहाँ तक की बिष्टा के कीड़े तक भी बनते हैं।''

गुरु नानकदेव जी की साखी में आता है कि आपका एक सेवक जमींदार था। गुरु नानकदेव जी उस जमींदार से कहते कि अब तू बूढ़ा हो गया है '**नाम**' जपा कर लेकिन वह बहाने बनाकर टाल जाता। पता नहीं मौत की आवाज कब पड़ जानी है! आखिर उसकी मौत हुई। उसका घर में ही प्यार था, वह उसी घर में बछड़ा बनकर पैदा हुआ। घर के लोगों ने उस बैल को अच्छी तरह खेतों में जोता।

गुरु नानकदेव जी फिर उसके पास गए और उससे कहा, ''अब तो तेरा मुँह गूँगा है, ये लोग अच्छा खाना खाते हैं और तुझे खाने के लिए घास-फूस ही देते हैं; अब तो '**नाम**' जप।'' उसने कहा, ''दूसरा बैल कमजोर है उससे बोझ नहीं खिंचता इसलिए मुझे ही खींचना पड़ता है।'' मौत लिहाज नहीं करती, फिर मौत आ गई।

फिर उसी घर में कुत्ता बनकर पैदा हुआ। एक दिन सुबह घर के लोग जब हल जोड़ने लगे तो उनका पैर कुत्ते की पूँछ पर पड़ गया। कुत्ते ने लात को पकड़ा तो उन्होंने कुत्ते की कमर पर कुल्हाड़ी मारी जिससे कुत्ते की कमर टूट गई। अब वह कुत्ता उनके दरवाजे पर बैठा रहता, घरवालों की मर्जी होती तो उसे रोटी देते या न देते।

गुरु नानकदेव जी को तरस आया कि यह मेरा नामलेवा है। गुरु नानकदेव जी उसके पास गए तो उसने कहा, ''मेरी बहुएं सोती रहती हैं मेरे बेटे काम से थके आते हैं आकर सो जाते हैं। मैं जैसे-तैसे रात को घर की रखवाली करता हूँ और दिन में भी किसी को अंदर नहीं आने देता।'' गुरु नानकदेव जी वापिस चले गए।

फिर उसने साँप की योनि में जन्म लिया। साँप बनकर उसी घर में रहने लगा। एक दिन घर के लोग खेत में गए हुए थे। छोटा बच्चा रोने लगा, उसने सोचा! यह मेरा पोता है मैं इसे चुप करवाऊँ। मोह में बँधा हुआ यह भूल गया कि मेरी तो शक्ल देखकर ही लोग डर जाते हैं। वह जैसे ही बच्चे को चुप करवाने लगा इतने में घर के लोगों ने दरवाजा खोला और उस साँप को डंडों से मार दिया कि अगर हम समय पर नहीं पहुँचते तो यह साँप हमारे बच्चे को खा जाता।

हम जिंदगी में कई ऐसे वाक्य देखते भी हैं। वे ऐसे ही घर के बुजुर्ग होते हैं जो ऐसी योनियों में आते हैं। हमारी आँखें बंद हैं; इसलिए हम नहीं जानते कि यह जानवर कौन है?

आखिर वह उसी घर में नाली का कीड़ा बना। तब गुरु नानकदेव जी ने मरदाने से कहा, ''हमने बहुत दूर जाना है वहाँ हमारा एक सेवक बहुत मुश्किल में फँसा हुआ है।'' वहाँ पहुँचकर गुरु नानक जी ने मरदाने से कहा इस नाली में से थोड़ा सा पानी निकाल, पानी बाहर निकाला तो कीड़ा तड़पने लगा। गुरु नानक जी ने मरदाने से कहा यह हमारा अमुक सतसंगी है। महाराज सावन सिंह जी कहा करते थेः

जहाँ आसा तहाँ वासा।

जहाँ जीव की आशा होती है वह वहीं जाकर जन्म लेता है, ज्यादा से ज्यादा पड़ोस तक ही जाता है। कबीर साहब का अनुराग सागर* पढ़ें! जब कबीर साहब धर्मदास से मिले तो उन्होंने धर्मदास से कहा, ''मैंने तुझे **'नाम'** दिया है, मैं कई जन्मों से तेरे पीछे फिर रहा हूँ।''

मैंने कई बार तुलसी साहब की बानी पर सतसंग दिए हैं। तुलसी साहब कहते हैं, ''जैसे शाह की कोई आसामी कर्ज लेकर कलकत्ता, बम्बई चली जाए तो शाह अपना कर्ज वसूल करने के लिए उसके पीछे अवश्य जाता है। इसी तरह अगर गुरु का सेवक कोई खोटा कर्म करके नरक में चला जाए तो गुरु उसे नरक से निकालने के लिए अवश्य जाता है क्योंकि उसे अपने **'नाम'** की लाज होती है।''

पहली बात तो यह है कि सन्तों की चेताई हुई आत्मा को काल अंगीकार ही नहीं करता अगर सन्तों की चेताई हुई आत्मा को काल ले जाए तो सन्त नरक में जाकर सभी जीवों को शान्त करते हैं। पिछले जमाने में यह कायदा था अगर राजा जेल देखने जाए तो सभी कैदी रिहा करने पड़ते थे। जब राजा जनक नरक से गुजरे तब उन्होंने अपना सिमरन देकर नरकों को ठंडा कर दिया।

ओनां पास दुआस न भिटीऐ जिन अंतर क्रोध चंडाल।

आप कहते हैं, ''हमें निन्दा, चुगली और क्रोध करने वालों से दूर रहना चाहिए अगर हमारी रसोई में कोई भंगी आ जाए तो हम रसोई को भ्रष्ट मानते हैं। मनमुख सारा दिन महात्मा की निन्दा करते हैं और परमात्मा को गालियाँ निकालते हैं क्योंकि उन्हें निन्दा करने की आदत पड़ी होती है।''

हमारे सतगुरु महाराज सावन सिंह जी कहा करते थे, ''निन्दा एक बेलज़्ज़त गुनाह है। निन्दा न खट्टी है, न मीठी है लेकिन यह जिनके साथ चिपटी हुई है अगर उन्हें कोई निन्दा करने वाला मिल जाए तो वे **'नाम'** जपना छोड़ देंगे, सोना छोड़ देंगे। निन्दा करते हुए नहीं थकेंगे।''

* भव सागर

महाराज सावन सिंह जी कहा करते थे, ''बीबीयाँ बहुत सेवा करती हैं। शब्द बोलते हुए बीबीयों की आवाज मर्दों से ज्यादा होती है लेकिन निन्दा इनका सब कुछ ले जाती है अगर निन्दा करनी हो तो बीबीयाँ सच्चखंड से भी वापिस आ जाती हैं। हम जिसकी निन्दा करते हैं उसके पाप हमारे खाते में और हमारे शुभ कर्म उसके खाते में जमा हो जाते हैं। कोई समझदार आदमी ऐसा घाटे का सौदा नहीं करता।''

मैं तकरीबन सब पर निगाह रखता हूँ और सदा कहा करता हूँ कि यह पवित्र धरती है। यहाँ बुरा न सोचें लेकिन मुझे अफसोस से कहना पड़ता है इन्हें आदत पड़ी हुई है। ये एक-दूसरे के पास होकर चुटकी से बात छेड़ देती हैं। हमें इस गुनाह से बचना चाहिए। आप किसी भी सन्त-महात्मा की बानी पढ़कर देखें! सभी सन्त हमें निन्दा से दूर रहने के लिए कहते हैं। पल्टू साहब कहते हैं:

देखके निन्दक नूं करां प्रणाम, धन्य महाराज तूने भक्त धोया॥

आप कहते हैं, ''मैं निन्दक को प्रणाम करता हूँ कि तू भक्त को साफ कर देता है।''

सतगुर पुरख अमृतसर वडभागी नावेंह् आय॥
उन जनम जनम की मैल उतरै निरमल नाम दृढ़ाय॥

आप कहते हैं, ''सच्चा अमृतसर, मानसरोवर महात्मा की संगत है अगर हम इस सरोवर में नहाएं तो हमारी जन्मों-जन्मों की मैल कट जाए।'' महात्मा की संगत करने से हमें अपनी गलतियों का पता लगता है; संगत में आकर ही शराबी, शराब और ऐबी, ऐब छोड़ता है। उसमें **'नाम'** जपने का शौंक, विरह, तड़प पैदा होती है। महात्मा की सोहबत-संगत ही सच्चे से सच्चा तीर्थ है। ब्रह्मानंद जी कहते हैं:

सत संगत जग सार साधो, सत संगत जग सार रे।
काशी नहाए मथुरा नहाए, नहाए हरिद्वार रे॥
चार धाम तीर्थ फिर आए, मन का नहीं सुधार रे।

मन्दिर जाए करे नित पूजा, राखे बड़ा अचार रे ॥
साधु जन की कद्र न जाने, मिले न सृजनहार रे ।
वन में जाए करे तप भारी, काया कष्ट अपार रे ॥
इन्द्रि जीत करे वस अपने, हृदय नहीं विचार रे ।

जिन्होंने सतसंग को अपना सहारा बना लिया सिर्फ वही बच सकते हैं; नहीं तो कभी काम, कभी क्रोध, कभी लोभ, कभी मोह और कभी निन्दा की लहरों में बह जाते हैं।

जन नानक उत्तम पद पाया सतगुर की लिव लाय॥

आप कहते हैं, ''हमें परमपद का इनाम - **नाम** मिल गया। गुरु ने हमें '**नाम**' की दौलत दी। परमात्मा ने हमारे लिए अपना दरवाजा खोल दिया, हमारा जन्म-मरण खत्म कर दिया। महात्मा अपने '**नाम**' की कोई फीस नहीं रखते जिस तरह कुदरत सबको हवा मुफ्त देती है, सूरज सबको प्रकाश मुफ्त देता है उसी तरह गुरु भी अपनी तालीम मुफ्त देते हैं।'' कबीर साहब कहते हैंः

नाम रतन धन कोठरी, खान खुली घट माहें।
सेत मेत ही देत हूँ, ग्राहक कोई नाहें॥

इस उत्तम अमोलक '**नाम**' के ग्राहक बहुत कम होते हैं लेकिन गुरमुख कहते हैं कि हम आपको यह '**नाम**' मुफ्त में ही देते हैं। हमें 'नाम' की कमाई करके अपने जीवन को पवित्र बनाना चाहिए। हमें सतसंग सुनने के बाद वहीं कपड़े झाड़कर नहीं आ जाना चाहिए।

महाराज सावन सिंह जी एक कहानी सुनाया करते थेः एक महाजन रोजाना सतसंग में जाया करता था। एक दिन उसे जरूरी काम पड़ गया, उसने अपने लड़के को सतसंग में भेज दिया। महात्मा सतसंग में बता रहे थे, ''सतसंग में सब मिलकर बैठें। सबसे प्यार करें। सबके अंदर परमात्मा है। गाय और गरीब पर दया करनी चाहिए।''

वह लड़का एक अच्छी आत्मा थी। जब वह दुकान पर आया तो गाय आटा खा रही थी। उसके मन में ख्याल आया कि हमारे पास बहुत

धन-दौलत है और मकानों का बहुत किराया आता है अगर यह गाय थोड़ा आटा खा लेगी तो क्या फर्क पड़ जाएगा! इतने में महाजन आ गया। यह देखकर वह बहुत परेशान हुआ और कहने लगा, ''ओ अंधे! तू देख नहीं रहा कि गाय आटा खा रही है?'' लड़के ने कहा, ''पिता जी! परमात्मा ने हमें बहुत धन-दौलत दी है अगर यह गाय थोड़ा सा आटा खा लेगी तो हमें क्या फर्क पड़ जाएगा?''

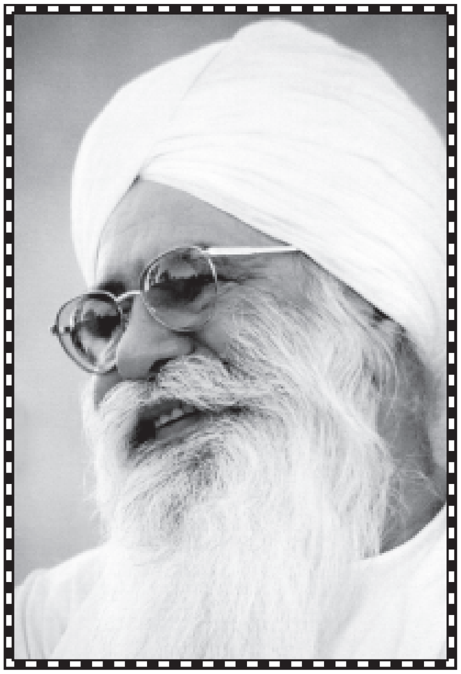

महाजन ने कहा कि तुझे यह शिक्षा कहाँ से मिली? लड़के ने कहा, ''आपने आज मुझे सतसंग में भेजा था, वहाँ महात्मा यही शिक्षा दे रहे थे कि गाय और गरीब पर दया करनी चाहिए।'' महाजन ने कहा, ''मुझे सतसंग में जाते हुए तीस साल हो गए हैं अगर मैं इन बातों पर अमल करता तो अभी तक अपना घर लुटवा चुका होता। सतसंग में जाना तो चाहिए लेकिन वहाँ की कोई बात पल्ले बाँधकर नहीं लानी चाहिए।'' कबीर साहब कहते हैं:

गुरु बेचारा क्या करे, जे सिक्खन में चूक।
अंधे एक न लग्गी, ज्यों बाँस बजाई फूक॥

हमारा भी फर्ज बनता है कि हम जो कुछ सतसंग में सुनते हैं सतसंग से आने के बाद उस पर विचार करें कि हमें सतसंग में क्या समझाया गया है, हममें क्या कमी है और हम उस कमी को कैसे दूर करें? किसी की निन्दा चुगली न करें। हम यह अहंकार करते हैं कि हम इतने दिनों से सतसंग में जा रहे हैं। स्वामी जी महाराज कहते हैं:

तुम सतसंग सुन क्या फल पाया।

अगर हम संगत में एक-एक ऐब छोड़ें तो हम थोड़े दिनों में सब ऐब छोड़कर महात्मा बन सकते हैं।

बाबा बिशनदास जी से मुझे 'दो-शब्द' का भेद मिला था। आप एक कंजूस की कहानी सुनाया करते थेः एक साहूकार के पास बहुत धन-दौलत थी लेकिन वह बहुत कंजूस था। कभी किसी को कुछ नहीं देता था लेकिन उसकी पत्नी बहुत पवित्र और सन्त-महात्माओं की सेवा करने वाली थी। वह कहती, ''लोग श्राद्ध करते हैं और भी बहुत दान-पुण्य करते हैं; हमें भी कुछ दान-पुण्य करना चाहिए।''

आखिर साहूकार ने एक दिन कहा कि मैं किसी पंडित को बुलाकर लाता हूँ। उन दिनों आमतौर पर लोग पंडितों को ही दान दिया करते थे। वह गंगा नदी के किनारे एक ऐसे पंडित को ढूंढने गया जो ज्यादा दान-दक्षिणा न माँगे। उसे चार पंडित मिले जो कर्मकांड में लगे हुए थे। साहूकार ने उनसे पूछा, ''पंडित जी! आप कितना खाना खा सकते हैं?'' उन पंडितों ने कहा कि वे दस किलो घी, पाँच किलो मिठाई, दूध इत्यादि खा लेंगे क्योंकि वे इतना सब खाने के आदी हैं। कंजूस ने सोचा कि ये पंडित तो बहुत खाते हैं इसलिए वहाँ से चल पड़ा।

आगे चलकर उसने एक ऐसा पंडित ढूंढ लिया जो बहुत कमजोर था। उसने सोचा यह पंडित मेरे लिए ठीक रहेगा क्योंकि यह ज्यादा नहीं खा सकेगा मैं इसे ही ले जाता हूँ, मेरी पत्नी खुश हो जाएगी। साहूकार ने उससे पूछा, ''पंडित जी! आप कितना खा सकते हैं?'' पंडित साहूकार के दिल की बात समझ गया कि यह कंजूस आदमी है। पंडित ने कहा, ''मैं बहुत कमजोर हूँ, हमेशा बीमार रहता हूँ ज्यादा नहीं खा सकता। बस! थोड़ा सा रूखा-सूखा खा लूँगा।'' साहूकार ने घर आकर अपनी पत्नी से कहा, ''मैंने एक पंडित ढूंढ लिया है। जब वह आए और जो माँगे उसे देकर खुश कर देना।'' साहूकार की पत्नी बहुत खुश हुई कि मेरे पति ने मुझे दान-पुण्य का अच्छा मौका दिया है।

पंडित जी साहूकार के घर पहुँचे। साहूकार की पत्नी ने पंडित जी का आदर-सत्कार करते हुए पूछा कि पंडित जी आपको क्या-क्या चाहिए? पंडित ने अच्छा मौका देखकर पेड़े, मिठाई, घी और बहुत सी सामग्री मँगवाई और कहा, ''ये सब खाकर हमारे दाँत भी घिसते हैं। तुमने जो गहने पहन रखे हैं इन्हें दाँत घिसाई में दान दे दो।'' साहूकार की पत्नी ने सोचा कि पतिदेव कह गए हैं कि पंडित जो माँगे दे देना। उसने जो गहने पहने हुए थे वे सब पंडित को दान में दे दिए।

ये सब चीज़ें लेकर पंडित अपने घर चला गया लेकिन वह डरा हुआ था कि उसने एक कंजूस को धोखा दिया है। पंडित ने सब चीज़ें अपनी पत्नी को देकर कहा, ''अब इन चीजों को संभालकर रखना तुम्हारी हिम्मत है; कहीं वह कंजूस साहूकार इन्हें वापिस लेने न आ जाए!'' पंडित की पत्नी बहुत चालाक थी। उसने कहा कि तुम चिन्ता मत करो, बिस्तर पर लेटकर इस तरह कराहो कि जैसे तुम बीमार हो।

जब कंजूस साहूकार को पता चला तो वह सीधा पंडित के घर जा पहुँचा। वहाँ जाकर उसने देखा कि पंडित कराह रहा है जैसे वह मरने वाला हो। उसकी पत्नी भी जोर-जोर से रोकर कह रही थी, ''पता नहीं पंडित जी आज किसके घर से खाना खाकर आए हैं! हो सकता है उस खाने में जहर मिला हो जो यह मरने वाले हैं। अब क्या होगा? मेरे पास तो दवाई के लिए भी पैसे नहीं हैं।''

जब उस कंजूस साहूकार ने यह सब सुना तो वह डर गया कि हो सकता है, पुलिस इस मामले की जाँच करे! क्योंकि पंडित खाना तो उसके घर से ही खाकर आया था। इस डर की वजह से उसने पंडित की पत्नी को कुछ पैसे देकर कहा कि पंडित जी को डाक्टर से दवाई दिलवाओ। कंजूसों की यही हालत है।

गुरु साहब कहते हैं, ''न माया में तृप्ति है, न बादशाही में तृप्ति है। '**नाम**' मिले तभी तृप्ति और शान्ति आती है।'' हमें चाहिए कि हम '**नाम**' की कमाई करके अपने जीवन को पवित्र बनाएं। U U U

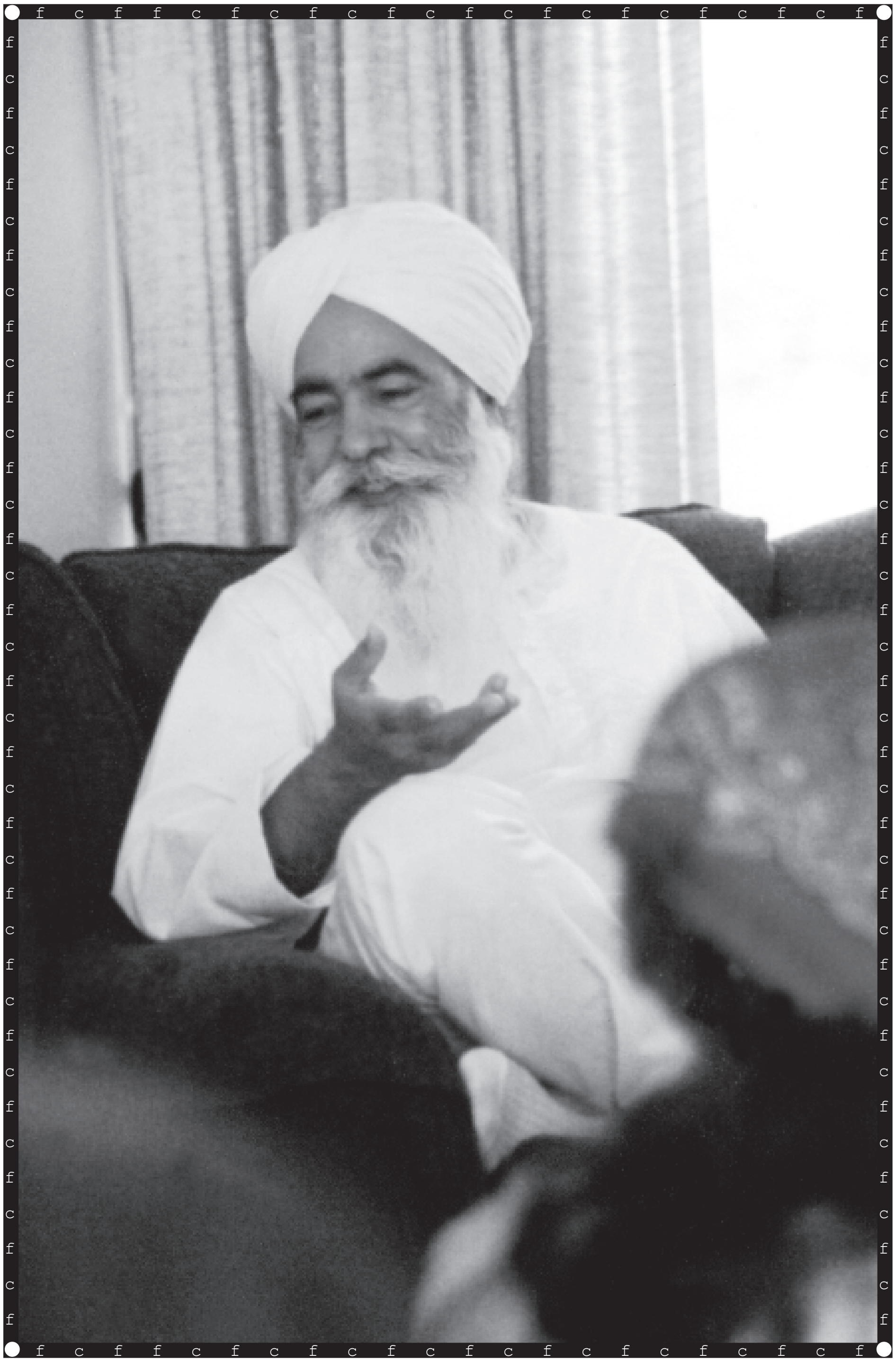

परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज द्वारा पश्चिमी प्रेमियों के सवालों के जवाब

सेवा का महत्त्व

मुम्बई 15 जनवरी 1980

एक प्रेमी - सन्त जी! जब आप बाबा बिशनदास जी से ज्ञान प्राप्त कर रहे थे, उस समय वह आपके साथ बहुत अधिक कठोर थे। मेरा ख्याल है कि इसी रूप में आपको उनका आशीर्वाद मिला लेकिन हमारी तालीम बहुत भिन्न है। मैं अपनी नम्रता की कमी के कारण बहुत हतोत्साहित हो जाता हूँ। आप हम जैसों की क्या मदद कर सकते हैं?

बाबा जी - नम्रता पैदा करने के लिए सबसे अच्छा तरीका है कि ज्यादा से ज्यादा भजन-अभ्यास करें अगर शिष्य में कोई गलती न हो तो गुरु फटकारते नहीं। जिन प्रेमी आत्माओं के अंदर गुरु के प्रति विश्वास है जब वे फटकारी जाती हैं तो उस फटकार में भी गुरु की दया होती है। गुरु अपने शिष्यों को बहुत अच्छा बनाना चाहते हैं लेकिन हमारी हालत ऐसी है कि जब हमें गुरु की फटकार मिलती है तो हमारे रंग बदल जाते हैं, हम नाराज हो जाते हैं और कभी-कभी तो गुरु से दूर भी हो जाते हैं।

नम्रता न होने के कारण हम फटकार सहन नहीं कर पाते, पहचान नहीं पाते कि उस फटकार में कितनी दया है? अगर हम यह गुण धारण कर लें! गुरु जो भी दे, उसे स्वीकार करें। जब गुरु डाँटे तब हम नाराज न हों तभी हम अपने अंदर नम्रता का विकास कर सकते हैं।

गुरु की मर्जी में खुश रहें, गुरु से फटकार या प्रशंसा जो भी मिले हम उसे स्वीकार करें; तभी हम अपने अंदर नम्रता ला सकते हैं।

हजरत बाहू कहते हैं, ''गुरु धोबी की तरह है। वह यह नहीं देखता कि कपड़ा जेन्टलमेन का है या तेली का है। उसे अपने करतब पर मान होता है। वह कपड़ों को साफ करने के लिए साबुन और कई चीज़ों का

इस्तेमाल करता है। उसे उन कपड़ों को साफ करने से मतलब है। इसी तरह गुरु भी धोबी की तरह काम करते हैं। वे शिष्य पर कोई साबुन नहीं लगाते लेकिन अपनी कठोरता के जरिए शिष्य पर मेहनत करते हैं। उन्हें शिष्य की पवित्रता की परवाह होती है लेकिन हमारी यह हालत है कि हम यह सब स्वीकार नहीं करते।

शिष्य के दिल में गुरु के प्रति प्यार और भरोसा होना चाहिए। शिष्य को सोचना चाहिए कि गुरु जो भी करता है उसके भले के लिए और उसे पवित्र बनाने के लिए ही करता है अगर गुरु कठोर हो जाए तो शिष्य गुरु से अपना मुँह मोड़ लेते हैं और दूर हो जाते हैं।

सन्त-सतगुरु अनुभवी और पूर्ण पुरुष होते हैं। उनके वचन हमेशा सच निकलते हैं। वे शिष्य के बारे में सब कुछ जानते हैं। वे जानते हैं कि शिष्य किस तरह कर्मों से छूट सकता है। वे हमेशा समझदारी के शब्द उचारते हैं। गुरुमुख के मुख से जो शब्द निकलते हैं उनके एक या अनेक अर्थ होते हैं। वे शिष्य के सामने ऐसी परिस्थिति पैदा कर देते हैं, जिससे शिष्य अपने कर्मों का भुगतान आसानी से कर सके। गुरु सब कुछ देख सकते हैं जबकि शिष्य अंधे होते हैं। शिष्य नहीं जानते कि उनके लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा है?

गुरु शिष्य के बारे में सब कुछ जानते हैं। कभी कर्म बहुत भारी होते हैं। गुरु उन कर्मों के भुगतान के लिए शिष्य के सामने सबसे आसान बात, सबसे आसान चीज रखते हैं लेकिन शिष्य को लगता है कि गुरु बहुत कठोर हैं। जब गुरु शिष्य के साथ कठोर व्यवहार करते हैं तो शिष्य उनसे दूर हो जाते हैं। शिष्य समझते हैं कि गुरु बेकार में ही उनके साथ कठोर व्यवहार कर रहे हैं।

उस समय शिष्य अपने आपको भाग्यवान महसूस करें कि गुरु कठोर बनकर उनकी मदद कर रहे हैं। उनसे कष्ट भुगतवाकर उनके कर्मों का भुगतान करवा रहे हैं लेकिन हम लोग यह नहीं समझते और गुरु से दूर हो जाते हैं।

एक प्रेमी - हम लोग जब काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार की बीमारियों को मिटाने के लिए गुरु से प्रार्थना करते हैं तो क्या उससे गुरु को कोई कष्ट होता है?

सन्त जी - मैं हमेशा कहा करता हूँः गुरु सदा ही शिष्य की मदद करता है। गुरु की मदद के बिना शिष्य कुछ भी हासिल नहीं कर सकता। जैसे बच्चा सो रहा हो तो माता घर की देखभाल करती है। जब बच्चा जाग जाता है, रोने लगता है तो माता सारे काम छोड़कर बच्चे के पास दौड़कर आती है और बच्चे की माँग पूरी करती है।

गुरु का ध्यान हमेशा हमारी तरफ रहता है, वह हर समय हमारी मदद कर रहा होता है लेकिन जब हम प्रार्थना करते हैं तो गुरु हमारी तरफ विशेष ध्यान देता है; हमारी मुनासिब मदद करता है और जरूरत अनुसार हमारे कर्म भी अपने ऊपर लेता है। कबीर साहब कहते हैंः ''मैंने जब बाहें फैलाकर गुरु को पुकारा, गुरु आया और उसने मुझे अपनी बाहों में उठा लिया।''

एक प्रेमी - आपने कहा है कि हमें गुरु से प्यार और भजन-सिमरन माँगना चाहिए। क्या हमें प्रार्थना करनी चाहिए या जो कुछ आपने दिया है उसे स्वीकार कर लेना बेहतर है?

बाबा जी - आप जो प्रार्थना करते हैं वह ठीक है। सिर्फ प्रार्थना करने से ही काम नहीं चलेगा, आपको सिमरन भी करना होगा। जैसे विद्यार्थी स्कूल ही न जाए! रास्ते में बैठकर अध्यापक से प्रार्थना करने लगे कि मेरी पाठ में मदद करें; वह परीक्षा में पास नहीं हो सकेगा। जब वह स्कूल जाकर अध्यापक से प्रार्थना करेगा तब अध्यापक जरूर मदद करेंगे और वह बहुत कुछ सीखेगा। वह अध्यापक के कहे का पालन करेगा तो परीक्षा में जरूर पास होगा।

इसी तरह जब हम दिल से प्रार्थना करते हैं तब हमें साथ-साथ सिमरन भी करना चाहिए और आज्ञा का पालन भी करना चाहिए। हम ऐसा करेंगे तो हमारी प्रार्थना के अच्छे परिणाम निकलेंगे।

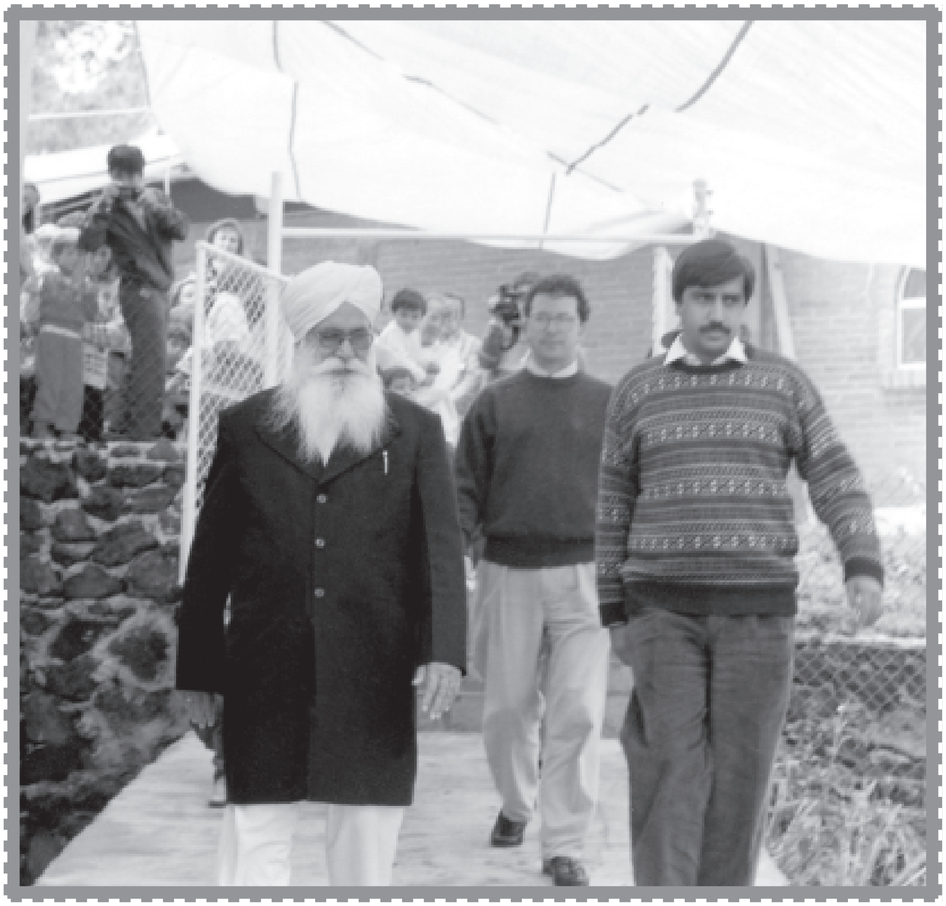

सन्त कहते हैं, ''हे परमात्मा! अगर हम तेरे 'नाम' के अलावा कुछ भी माँगें तो हमें शान्ति नहीं मिलेगी। सब चीजें हमें दुःख देंगी इसलिए आप दया करके हमें अपना 'नाम' दें।''

हम सांसारिक जीव नहीं जानते कि गुरु से क्या माँगना है? इसलिए हम कष्ट भोगते हैं। हम हमेशा सांसारिक चीजें माँगते हैं जो कष्ट और मुसीबत का कारण बनती हैं। जब हम गुरु से सांसारिक चीजें माँगते हैं तो गुरु जरूर देता है। हम उस वस्तु को पाकर शुरू-शुरू में खुश होते हैं लेकिन जब उसका उपयोग करने लगते हैं तो वही चीज़ें दुखदायी साबित होती हैं। फिर हम गुरु से उन चीज़ों को वापिस लेने के लिए

प्रार्थना करते हैं। गुरु और परमात्मा को छोड़कर हम जो कुछ भी उससे माँगते हैं वह आज या कल तकलीफ देती हैं।

इसलिए गुरु से सिर्फ गुरु को ही माँगें। जब गुरु आपके अंदर प्रगट हो जाएगा तब आपको और कुछ माँगना ही नहीं पड़ेगा क्योंकि वह बिना माँगे ही आपकी हर जरूरत को पूरा करेगा।

एक प्रेमी - आप हमें गुरु के प्रति **सेवा का महत्त्व** समझाएं?

बाबा जी - मैं सेवा के बारे में बहुत कुछ बोल चुका हूँ। इस बारे में सन्तबानी मासिक पत्रिका में बहुत कुछ छप चुका है। आप लोगों को सन्तबानी पत्रिका के उस अंक को पढ़ना चाहिए।

आप लोग राजस्थान जाते हैं, आपने वहाँ देखा है कि सेवादार कैसे काम करते हैं। राजस्थान के सेवादार अनपढ़ किसान हैं वे आपकी भाषा नहीं जानते। वे महीने में बीस दिन अपना दुनियावी काम करते हैं और दस दिन जब आप वहाँ होते हैं तो वे सेवा करने आते हैं। उन्हें आपकी भाषा नहीं आती फिर भी वे पूरे दिल से आपकी सेवा करते हैं। उन्हें देखकर आप लोगों को भी सीखना चाहिए।

राजस्थान के सेवादार अनपढ़ हैं, वे नहीं जानते कि आप उनकी सेवा से खुश हैं या नहीं? वे फिर भी सेवा करते रहते हैं। जब आप लोग मुझे बताते हैं कि हम सेवादारों की सेवा से खुश हैं। तब मैं उन्हें बताता हूँ कि वे जो सेवा कर रहे हैं, वह सेवा स्वीकार है।

हम इस दुनिया में लोगों की सेवा करते हैं तो कई बार उस सेवा का फल यहीं पा लेते हैं। जो सेवा करता है उसे सब कुछ मिलता है। गुरु ग्रन्थ साहब में लिखा है अगर हम इस दुनिया में लोगों की सेवा करते हैं तो जब हम गुरु के धाम पहुँचते हैं गुरु हमारी कद्र करता है।

जिस समय भारत पर मुसलमान राज कर रहे थे, उस समय सिखों को बहुत सताया गया। सिखों ने कुछ प्रान्तों पर चढ़ाई करके मुसलमानों को परेशान किया। मुसलमानों ने सोचा अगर देश का कुछ

हिस्सा सिखों को दे देंगे तो सिख उन्हें परेशान नहीं करेंगे। मुसलमानों ने एक प्रान्त सिखों को दे दिया। उस सिख समुदाय में एक झाड़ू लगाने वाला था, जो गुरु और दूसरे लोगों की सेवा करता था। सिखों ने वह प्रान्त उस झाड़ू लगाने वाले के नाम कर दिया। जब हम निःस्वार्थ भाव से गुरु और संगत की सेवा करते हैं तो हमें उस सेवा का फायदा इसी दुनिया में मिल जाता है।

इसलिए हमें हमेशा पूरे दिल से सेवा करनी चाहिए। स्वामी जी महाराज कहते हैं, ''जिसे जो भी सेवा मिले शारीरिक, मानसिक, आर्थिक या सुरत-शब्द की उसे उस सेवा से फायदा उठाना चाहिए।''

यह किस्सा राजस्थान के प्रेमियों का है। आश्रम के नज़दीक एक गाँव में दो परिवार रहते थे, एक परिवार में एक बेटा और दूसरे परिवार में दो बेटे थे। वे तीनों जवान बेटे एक हत्या के मामले में फँस गए; उनका उस हत्या में कोई हाथ नहीं था। उस गाँव के कुछ लोग दोनों परिवारों को पसन्द नहीं करते थे इसलिए उन लोगों ने झूठ बोलकर उनके खिलाफ फर्जी मामला दाखिल कर दिया।

हत्या का मामला बड़ा संगीन था इसलिए उन तीनों जवानों का छूटना असम्भव था। उनके माता-पिता ने अच्छे वकील किए, काफी पैसा खर्च किया लेकिन उनके छूटने की कोई उम्मीद नहीं थी। किसी ने उनके माता-पिता से कहा कि वे गुरु के लंगर में बरतन धोएं। हो सकता है गुरु की दया से कुछ मदद मिल जाए। वे आश्रम में आए और सतसंग के बाद थालियाँ धोने लगे, हालांकि आप जानते हैं कि आश्रम में अपनी थाली खुद धोनी पड़ती है। उन्होंने दूसरे सतसंगियों से प्रार्थना करके उनकी थालियाँ धोकर यह सेवा की।

गुरु की दया से सात महीने बाद उनके तीनों जवान बेटे छूट गए। उनके माता-पिता उन तीनों को आश्रम लाए और उनसे कहा, ''हमने तुम्हें छुड़वाने के लिए बहुत पैसा खर्च किया लेकिन तुम छूट नहीं सके। हमने यहाँ आकर संगत की थालियाँ धोई इसलिए तुम छूट गए हो।''

आप भी **सेवा का महत्त्व** समझें! संगत की सेवा करके अपना जीवन सफल बनाएं। संगत की सेवा करने से आपको दुनियावी जीवन में मदद मिलेगी और आपकी आत्मा की मैल भी उतरेगी। सेवा हमारे दुनियावी जीवन को ही नहीं बल्कि रूहानी जीवन को भी सुधारती है। सेवा करना बहुत अच्छा है। कोई भी इसे आजमाकर देख सकता है। जो सेवा करता है उसे मेवा अवश्य मिलता है।

बचपन में मेरा भी सेवा की तरफ भाव था। पंजाब में एक जगह मुक्तसर साहब है। वहाँ सिख लोग गुरुद्वारे के पास तालाब बना रहे थे। देश के अलग-अलग भागों से बहुत से लोग वहाँ सेवा करने आए। उस समय मैं किशोर था और मुझे **सेवा के महत्त्व** का अंदाजा नहीं था कि हमें सेवा क्यों करनी चाहिए? मेरे माता-पिता वहाँ सेवा कर रहे थे इसलिए मैं भी उस तरफ खिंचा चला गया।

उस समय मैं बाबा बिशनदास जी से नहीं मिला था। मुझे किसी पंथ या भगवान का कोई ज्ञान नहीं था लेकिन मेरी सेवा करने की इच्छा थी। मैं अपने घर से लंगर के लिए चाय, चीनी और कुछ धन जो मेरी हैसियत में था ले जाता था।

आमतौर पर गाँव के लोग पखाना करने के लिए खेतों में जाते थे। मैंने देखा कि उसी पखाने पर बैठने वाली मक्खियाँ लंगर के भोजन पर बैठती थी। मैं सारा दिन उस गंदगी पर रेत डालता ताकि मक्खियाँ लंगर के भोजन पर न बैठें। इस सेवा के लिए मुझे किसी ने नहीं कहा था। कोई भी यह सेवा नहीं करना चाहता था। पखाने की गंदगी पर रेत डालना बहुत नीचे दर्जे की सेवा है। मैंने सोचा! यह अच्छा मौका है इस तरह मैं लोगों की सेवा कर सकता हूँ।

हमें जब भी गुरु की सेवा का कोई मौका मिले तो उसका फायदा उठाना चाहिए अगर हम नीचे दर्जे की सेवा करते हैं तो उसका ऊँचा फल मिलता है। सेवा करने से हमारी आत्मा को शान्ति मिलती है और हमारा मन स्थिर होता है। सेवा करने से हमारे मन में नम्रता आती है।

सेवा करने से भजन-अभ्यास करने की इच्छा पैदा होती है। हम सेवा करने के बाद भजन-अभ्यास में बैठते हैं तो भजन बनता है।

एक प्रेमी - सन्त जी! आप अपने सेवादारों से कहें कि उनकी सेवा बहुत अच्छी है। हम कुछ भी कहने से डरते हैं क्योंकि हम उनकी सेवा बिगाड़ना नहीं चाहते।

बाबा जी - हमें कभी भी सेवादारों की तारीफ उनके मुँह पर नहीं करनी चाहिए। उनके सामने उनकी तारीफ करके हम उनका भला नहीं करते। जब आप लोग सेवादारों की तारीफ करते हैं तो वे सोचते हैं कि प्रेमी उनकी सेवा से खुश हैं इसलिए वे सेवा में इतना ध्यान नहीं देते, मेहनत नहीं करते और यह तारीफ उनको बिगाड़ देती है। कई सेवादार यह आशा करते हैं कि गुरु उनकी तारीफ करे। जब गुरु उनकी तारीफ करते हैं तो वे भजन-अभ्यास छोड़ देते हैं; सोचते हैं! गुरु उनसे बहुत खुश है, अब उन्हें भजन-अभ्यास करने की क्या जरूरत है?

अगर बाबा बिशनदास ने मेरी तारीफ की होती तो हो सकता है कि मैं बिगड़ जाता। मैं अपना सारा वेतन लेकर उनके पास जाता, जिसमें से वे मुझे खर्च करने के लिए सिर्फ पाँच रुपये ही देते थे। उन्होंने कभी इस बात की सराहना नहीं की कि यह एक अच्छा लड़का है बल्कि वे मुझे थप्पड़ लगाते।

मेरे दिल में बाबा बिशनदास जी के लिए बहुत इज्जत है। मैं जब भी उन्हें याद करता हूँ या उनके बारे में बात करता हूँ तो मुझे रोना आ जाता है क्योंकि उन्होंने ही मेरी जिंदगी बनाई। बाबा बिशनदास जी के प्रशाद के कारण ही मेरी मुलाकात महाराज कृपाल से हुई।

अगर शिष्य गुरु की लताड़ सहता है तो यह उसके लिए बहुत अच्छा है अगर शिष्य गुरु के वचनों का पालन करता है तो उसे इस संसार में और आगे भी फायदा मिलता है।

U U U

परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज द्वारा गुफा दर्शनों के समय महत्त्वपूर्ण सन्देश

मन की एकाग्रता

16 पी.एस. राजस्थान 31 अक्टूबर 1987

इस जगह के बारे में आप सभी ने बहुत कुछ सुना है और सन्तबानी मैगज़ीन में भी पढ़ा है। हमने इस जगह की महानता को समझना है। सन्तमत अपने आपको सुधारने का, समझने का और करनी का मत है। सन्तमत बातें करने का और पढ़-पढ़ाई का मत नहीं। सन्त पढ़ाई को बुरा नहीं कहते लेकिन हमने अपने अंदर झाँककर देखना है कि हम जो कुछ पढ़ते लिखते और सुनते हैं; क्या उस पर अमल करते हैं?

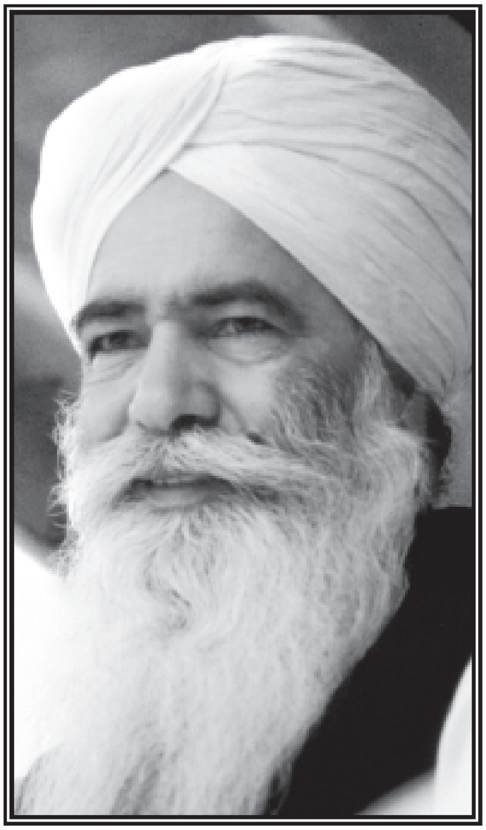

महाराज सावन सिंह जी कहा करते थे, ''पश्चिमी प्रेमी बहुत जल्दबाजी करते हैं। एक पश्चिमी प्रेमी ने आपसे 'नाम' लेने के एक महीने के अंदर ही पत्र लिख दिया कि मेरी कुछ तरक्की नहीं हुई।'' आप कहा करते थे कि हमारे मन को जन्मों-जन्मों से बाहर भटकने की आदत पड़ी हुई है। हम दिनों महीनों में **मन की एकाग्रता** नहीं बना सकते। हो सकता है कि इस मन को समझाते-समझाते पूरा जीवन ही लग जाए! यह हम पर निर्भर है कि हम कितनी मेहनत करते हैं, हमारे ख्याल कितने पवित्र हैं, हम जो रोजी-रोटी कमा रहे हैं वह कितनी पवित्र है?

सतगुरु अभूल होता है। वह जिस आत्मा को 'नाम' देता है उसे भूलता नहीं। सतगुरु शब्द-स्वरूप होता है, इंसानी जामें में भगवान ही होता है। सतगुरु जानता है कि मैंने जिसे 'नाम' दिया है वह इस समय क्या कर रहा है और उसे किस चीज़ की जरूरत है? हम जब अपने अंदर जरूरत से ज्यादा ख्वाहिशें उठाते हैं, तभी दुःखी होते हैं और भरोसा खो देते हैं।

माता अपने बच्चे को दुःखी नहीं देख सकती। कई बार बच्चे की बेहतरी के लिए उसे कड़वी दवाई भी देनी पड़ती है। बच्चे को फोड़ा-फुन्सी हो तो उसका ऑपरेशन भी करवाना पड़ता है। माता या डाक्टर की बच्चे के साथ दुश्मनी नहीं। हमें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए, अपना भजन-अभ्सास जारी रखना चाहिए।

सतगुरु का नूरी स्वरूप, शब्द, सूरज, चन्द्रमा, सितारे सब अंदर हैं। हमें अपने फैले हुए ख्याल को सिमरन के जरिए आँखों के पीछे इकट्ठा करने की जरूरत है। जब हम एकाग्र हो जाते हैं तब हम नूरी स्वरूप, सूरज, चन्द्रमा, सितारे सब अपने अंदर ही देख लेते हैं। जब हमारा मन भटक जाता है, ध्यान नीचे गिर जाता है तब हम न शब्द सुन सकते हैं न अंदर प्रकाश ही देख सकते हैं।

कई बार जब हमारे **मन की एकाग्रता** भंग हो जाती है और हम कई-कई दिन एकाग्र नहीं हो पाते तब सोचते हैं कि शायद सतगुरु दया नहीं कर रहे! हम घबराकर सन्तमत को छोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। प्यारेयो! सतगुरु की दया सदा जारी रहती है। चाहे सतगुरु शरीर छोड़ जाए उन्होंने जिन्हें 'नाम' दिया होता है उन पर पहले से भी ज्यादा दया करते हैं।

जब फिर दिल को चोट लगती है और हम मन को एकाग्र करते हैं तब दया को महसूस करते हैं तब फिर अंदर प्रकाश, सूरज, चन्द्रमा, सितारे देखने लग जाते हैं।

आपने अनुराग सागर में पांडवों के बारे में पढ़ा है कि उन्होंने बारह साल बनवास में काटे। उस समय हिन्दुस्तान में यह रिवाज था कि लड़की की शादी के लिए स्वयंवर रखा जाता था। लड़की जिसके गले में वरमाला डाल देती उसे ही शादी समझा जाता था।

द्रौपदी के पिता ने स्वयंवर की शर्त रखी कि जो आदमी नीचे रखे तेल की कड़ाही में देखकर ऊपर तेज घूमने वाली मछली की आँख में तीर चला दे! वही आदमी दौपद्री से शादी कर सकता है।

उस समय अर्जुन बनवासियों के भेष में घूम रहा था। उस स्वयंवर में अर्जुन ही कामयाब हुआ। जब द्रौपदी की शादी उस गरीब से हो गई तो द्रौपदी की सखियों ने उसे ताने देते हुए कहा, ''तेरी शादी एक बनवासी के साथ हुई है।'' द्रौपदी अंदर के राज़ की वाकिफ थी, उसने कहा, ''आप लोग जो कहती हैं वह तो ठीक है लेकिन इस तरह का निशाना कोई एकाग्रचित ही लगा सकता है। हो सकता है यह कभी संसार का विजेता साबित हो।''

जब महाभारत का युद्ध हुआ तो अर्जुन ही विजेता साबित हुआ। सन्तमत में हमारी जितनी ज्यादा **मन की एकाग्रता** होगी हम अपने आपको उतना ही गुरु परमात्मा के नजदीक समझेंगे। 'शब्द' को अच्छी तरह सुन सकेंगे और प्रकाश को देख सकेंगे।

मेरे ऊँचे भाग्य थे कि मेरे गुरु ने मुझसे जो कहा मैं वह कर सका। यह मकान-गुफा मैंने अपनी खुशी से नहीं बनाया था, यह आपकी दया से ही बना। जब आपने मुझे इस गुफा के अंदर दाखिल करके मेरी आँखों पर हाथ रखकर कहा कि बाहर नहीं देखना अंदर देखना है तो मैंने आपसे यही प्रार्थना की, ''मेरी लाज आपके हाथ है।''

मैंने पहले भी कहा है कि सतगुरु अभूल होता है। यह आपकी दया ही थी कि आप अपनी बीमारी के दिनों में भी अंदरूनी और बाहरी रूप से हमेशा ही इस गरीब आत्मा की संभाल करते रहे।

U U U

धन्य अजायब

दिल्ली में सतसंग का कार्यक्रम

18, 19, 20 मई 2007
कम्युनिटी सैन्टर
भेरा इन्कलेव, पश्चिम विहार
नई दिल्ली – 110 087
मोबाइल : 98101 – 94555

अहमदाबाद में सतसंग का कार्यक्रम

10, 11, 12 अगस्त 2007
श्री देशी लोहाना विद्यार्थी भवन
(व्यायाम विद्यालय के पीछे) कांकड़िया
अहमदाबाद (गुजरात)